Inspira- Journal of Modern Management & Entrepreneurship (JMME)
ISSN : 2231–167X, General Impact Factor : 2.7282, Volume 09, No. 03, July, 2019, pp. 159-162

भारतीय समाज में विधवा महिलाओं की प्रस्थिति का एक समाजशास्त्रीय विवेचन

योगिता रानी पंवार*

सार

सम्पूर्ण भारतीय सामाजिक संरचना में विषमता एक अनिवार्य अंग के रूप में सदैव विद्यमान नहीं है। कभी इसका आधार वर्ण, कभी जाति तो लिंग रहा है। लैंगिक आधार पर स्त्रियाँ भारतीय सामाजिक व्यवस्था के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में सदैव ही दोहरे मापदण्ड़ों, दर्ज से प्रेरित उत्पीड़नात्मक व्यवहार का शिकार रही है। समाज में सधवा, विधवा नाम की उपश्रेणियों में स्त्रियों का विभाजन सामाजिक, सांस्कृतिक कारकों पर आधारित स्तरीकरण का स्वयं में एक विशिष्ट स्वरूप है। वर्तमान में वैश्वीकरण के विस्तार के कारण समाज का हर वर्ग प्रभावित हुआ है। महिलाएँ भी इसके प्रभाव से अछूती नहीं रही चाहे वह विधवा हो या सधवा महिलाएं। किन्तु भारतीय समाज पुरूष प्रधान समाज होने के कारण स्त्रियों की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक शैक्षणिक प्रस्थिति अच्छी नहीं है। घरेलू हिंसा, दहेज हत्या, बलात्कार, कन्याभ्रूण हत्या, जाति के बाहर विवाह करने पर आनर किलिंग (हत्या), पारिवारिक निर्णयों में उपेक्षा, सती प्रथा ऐसे कारण हैं, जिन्होंने महिला सशक्तीरण को भी प्रभावित किया है। वर्तमान में विधवा महिलाओं की समस्याएँ एक सामाजिक मुद्दा बन चुका है। अतः प्रस्तुत प्रपत्र का प्रमुख उद्देश्य समाजशास्त्रीय आधार पर विधवा महिलाओं की प्रस्थिति को समझना, उनके लिए विकास के क्या कार्य किए गए, उनका सामाजिक विश्लेषण करना है। भारतीय सामाजिक संस्थायें, परिवार नातेदारी, अन्तः वैययक्तिक सम्बन्धों पर पड़ने वाले प्रभावों एवं इससे उत्पन्न परिणामों का विश्लेषण करना है। प्रस्तुत प्रपत्र द्वैतियिक स्त्रोतों पर आधारित है।

संकेत शब्द: *परिवार, सधवा, नातेदारी, अन्तः वैयक्तिक सम्बन्ध, वैश्वीकरण, स्तरीकरण।*

———————

प्रस्तावना

भारतीय समाज में महिलाओं को परिवार का केन्द्र बिन्दु माना है। सृष्टि की निर्मात्री नारी किसी भी राष्ट्र, समाज, सभ्यता, संस्कृति का मापदण्ड है। नारी के प्रति सम्मान डॉ. हजारी प्रसाद त्रिवेदी ने भी नारी को किसी समाज के सांस्कृतिक विकास का प्रमुख मापदण्ड मानते हुए लिखा है कि यदि संसार में नारी न होती तो सभ्यता, संस्कृति न होती। किन्तु भारतीय समाज पुरूष प्रधान होने के कारण सदैव ही नारी को हेय दृष्टि से देखा जाता है। वर्तमान में आधुनिकीकरण, वैश्वीकरण, पाश्चात्य संस्कृति, सभ्यता का उदय होने के बावजूद भी बालक की तुलना में बालिकाओं की उपेक्षा की जाती है, शिक्षा की दृष्टि से लड़की को निरक्षर रखने, लड़कों की तुलना में साधारण सी शिक्षा देने की औपचारिकता है। राजनीति, व्यापार, अन्य सार्वजनिक गतिविधियों में पुरूष की तुलना में उसे पीछे रखने का और पुरूष की तुलना में उसे बराबरी का हम माँगने पर शारीरिक, मानसिक यातना देने का क्रम अभी भी जारी है। वह घर और बाहर संस्कृति की पोषिका अर्थव्यवस्था की धुरी, नीति आधारित राजनीति की संरक्षिका बनने की सामर्थ्य रखने के बावजूद समाज में उचित स्थान नहीं प्राप्त कर सकी है। विधवा महिलाओं को पीछे रखा है, इसलिए इस पुरूष प्रधान कठोर, निर्मम, शोषक दंभी माहौल में नारी सहमी, दुबकी, शोषित, लुटी हुई सी अपनी जिन्दगी जी रही है। सम्पन्न भारतीय समाज में विकास की दृष्टि से आज उसकी स्थिति सर्वाधिक विडम्बनीय है। समाजशास्त्र में गैर–बराबरी के कई पक्ष है। इस असमानता में गैर–बराबरी के कई पक्ष हैं। इस

* सहायक आचार्य, समाजशास्त्र विभाग, वैदिक कन्या बालिका पी.जी. महाविद्यालय, जयपुर, राजस्थान।

असमानता का कारण शोषण, भेदभाव रहा हैं वर्तमान में विधवा महिलाएँ उनके महिला अधिकार के प्रश्न, उनकी समाज में बराबरी दिये जाने, न्याय दिये जाने के प्रश्नों को उठाया जाने लगा है। उन्हें भोजन की बराबरी का प्राधिकार नहीं था, सम्पत्ति का प्राधिकार प्राप्त नहीं था, पढ़ने का अधिकार नहीं, कई यातनाएँ उसे भोगनी पड़ती है। इन यातनाओं से उसका भविष्य प्रभावित होता है। सामान्यतया जब हम विधवा महिलाओं में होने वाले इस भेदभाव की चर्चा करते हैं तो उसके कई सूत्र हैं। भेदभाव के इन स्वरूपों के सम्बन्ध समानता, अधिकार के प्रश्नों के साथ जुड़े हुए हैं। महिला–पुरूष की विषमता मात्र लैंगिक नहीं है। भारत की सामाजिक, सांस्कृतिक व्यवस्था, जाति व्यवस्था, सामाजिक सस्तरण, स्त्री–पुरुष सम्बन्धों को निर्धारित करती है।

विधवा की अवधारणा

विधवा का तात्पर्य उस महिला से है जिसने सामाजिक, आर्थिक, वैधानिक रूप से किये गए विवाह के बाद अपने पति को खो दिया है। उसका पति मर गया है। विधवा एक ऐसा सम्प्रत्यय है, जो कि एक स्त्री के लिए उसके लिए महिला शब्द का अर्थ बदल देता है। महिला दो शब्दो का योग है महि+ला, महि – उत्सव, ला – जननि है। महिला वह है जो पुरूषों के जीवन में उत्सव, हर्ष का कारक, हेतु, सेतु बनती हैं, जिसके होने से पुरूष के जीवन में सदैव उत्सव ही रहता है। **पाटिल गोदावरी डी. (2000)** – वैधव्य के विषयपरक, वस्तुपरक दोनों प्रकार के प्रभाव, परिणाम होते हैं। जहाँ तक विषयपरक परिणाम। राजकुमार (2000) रामायण में कहा गया है कि एक गहरा खतरा जो महिलाओं तक पहुँचता है उन्हें यकायक जकड़ लेता है वो है विधवापन विधवा होने के 12 दिन के अन्दर उसे सुहाग की तमाम प्रतीकों को स्वयं से अलग करना होता है। उदाहरणतः– दक्षिण में रूढ़िवादी ब्राह्मण परिवार में विधवा का अपना सिर मुंड़ाना होता है सफेद वस्त्र पहनना अनिवार्य है, मांगलिक कार्यों में भाग लेना वर्जित है। मुनिरूद्दीन कुरेशी (2003) सोशियल स्टेट्स ऑफ इण्डियन वूमनः में कहा कि पुरूष के साथ हमेशा आजीविका कमाने वाले व्यक्ति की धारणा प्रचलित रहती है और महिला उस पर निर्भर रहती है। वैवाहिक स्थिति एक महिला के लिए भाग्यशाली होती है, किन्तु वैधवय की स्थिति अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण होती है। पंडित रामाबाई (1988) "द हाई कास्ट हिन्दू वूमैन" में लिखती हैं कि पूरे भारत में यह माना जाता है कि वैधव्य एक हिन्दू विधवा के पूर्व जन्मों के कुकर्मों का दण्ड है, जो कि उसने अपने पति के प्रति निष्ठावान नहीं रहते हुए किया है, यह एक दयनीय दशा है। विधवा और विधुर दोनों के लिए लगभग समान है। लेकिन वस्तुपरक परिणाम विशेष रूप से पुरूषों, महिलाओं के मिध्य एकदम भिन्न भूमिका अदा करती है। वैधव्य के सम्बन्ध में जो सामाजिक परिणाम आता है, वो एक विधवा की स्व अवधारणा पर हानिकारक प्रभाव छोड़ता है। **डॉ. के. पदमनाभन (2006)** – "सोश्यो इकॉनोमिक स्टेटस ऑफ विडोज" में बताया कि एक महिला की स्थिति उसकी जीवन शैली दैनिक दिनचर्या में उसे पति की मृत्यु के बाद अनगिनत परिवर्तन आते हैं, उसका अपना वैवाहिक जीवन समाप्त हो जाता है। पति मृत्यु एक महिला की मनौवैज्ञानिक, सामाजिक जीवन शैली पर गहरा प्रभाव डालती है। एक विधवा नकारात्मक भावनाओं के आवरण से घिर जाती है। तनावपूर्ण स्थिति में आ जाती है, स्वयं को अलग–थलग अलगाव की स्थिति में पाती है। वैधव्य एक सामाजिक कलंक के रूप में एक महिला की पहचान के साथ जुड़ जाती है। **परमार लीना (2003)** – कारगिल वार विडोज में उल्लेख किया कि विडोहुड एक ऐसी घटना है, जो कि एक महिला के जीवन में व्यापक दुखदायी परिवर्तन लाती है, उसकी प्रस्थिति को इस प्रकार बल देती है कि वह स्वयं को असहाय, आशाविहीन समझने लगती है। **रेहाना घोड़िली** अपनी पुस्तक "वूमेन इन इण्डिया सोसायटी" लिखती है, कि विधवाओं के खिलाफ हिंसा एक सामान्य घटना बन गई है। परिवार, समाज में जो लोग सत्ता के केन्द्र हैं, वे आसानी से ऐसा कर डालते हैं, विधवा के स्वतंत्र अस्तित्व को परिवारजन स्वीकार नहीं कर पाते। उसकी सेल्फ इमेज को निम्न करने के लिए उसे परिवार जन हिंसा का शिकार बनाते हैं, ताकि वह पारिवारिक निर्णयों का विरोध न करे चाहे वे उसके विरूद्ध ही क्यों न हो, विधवा महिला के हँसने का मतलब है कि वह अपने मृत पति को भूल चुकी है। अतः इसे सदैव दुखी व उदास दिखना चाहिये।

अतः उपर्युक्त अवधारणाओं से स्पष्ट होता है कि एक स्त्री जब विधवा होती है, तो उसकी सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, हर स्तर पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है, उसे एक सामाजिक कलंक के रूप में माना जाता है। उसे सिंदूर लगाने, 16 श्रृंगार करने का अधिकार नहीं। धार्मिक कार्यों में, उत्सवों, त्यौहारों, संस्कारों में भाग लेने का अधिकार नहीं है। उसे सादा भोजन करना एवं सफेद वस्त्र धारण करके घर की चारदिवारी में बंद रहने का अधिकार दिया है। वह अपने आजादी, अधिकारों के लिए लड़ नहीं सकती, उसकी माँग नहीं कर सकती, उसे सती कर दिया जाता है। 1829 ई. में लार्ड बैटिक ने सती प्रथा अधिनियम पारित कर इसे अवैध घोषित किया फिर भी 1973 सीकर जिले, 1980 नागौर जिले, 1983 बिलापुर गाँव, 1983 मध्य प्रदेश के पन्ना जिला, 1987 में सीकर के गाँव देवराला में रूप कँवर सती होने के पुष्टी मिलती है।

भारत की विधवाओं की स्थिति

सम्पूर्ण भारतीय सामाजिक व्यवस्थाओं में विषमता पाई जाती है, कभी जाति, कभी वर्ग, लिंग, आयु रहा है। हिन्दू विधवाओं में विशेष तौर से स्वर्ण जातियों की विधवाएँ अधिक शोषण, अत्याचार का शिकार रही है। भारत में अधिकांश लोग धर्म को अधिक मानते हैं। धर्म के अनुसार विधवा पुनर्विवाह पाप होता है, इसलिए विधवाओं का विवाह नहीं किया जाता था। धार्मिकता के कारण विधवाओं का प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष रूप से शोषण होता आ रहा है। भारत के राजस्थान राज्य में रीति–रिवाज, परम्पराओं, संस्कारों, सामाजिक मूल्यों को अधिक मानते हैं। इसी आधार पर व्यक्ति के व्यक्तित्व का निर्धारण किया जाता है। यहाँ तक कि रहने, पहनने, बोलने सबका निर्धारण्ध परम्पराओं, सांस्कृतिक मूल्यों के आधार पर होता है। इसलिए राजस्थान में विधवा महिलाओं की स्थिति दयनीय है विशेष तौर से राजपूत विधवा महिलाओं की स्थिति में सुधार नहीं हुआ है। विधवा को कलंकनी, डयन, राण्ड जैसे शब्दों से बुलाया जाता है, शुभ कार्यों में विधवा का आगे आना अशुभ माना जाता है। राजस्थान के उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र में बाड़मेर, जोधपुर, नागौर, बीकानेर, श्रीगंगानगर, चुरू, हनुमानगढ़ आते हैं। इन क्षेत्रों में विधवा की परिभाषा ही बदल जाती है। इन क्षेत्रों में विधवा अकेली घर से बाहर निकलती, अकेले में किसी पुरूष से बात नहीं कर सकती, मेहंदी, चूड़ा, चूड़ियाँ, काजल, पायल, बिछिया, बिन्दी, ज्वेलरी आदि को पहन नहीं सकती। पति के मरने के बाद 1 साल तक घर से बाहर नहीं निकली। किसी को अपना मुँह नहीं दिखा सकती, तीज, त्यौहार, उत्सवों, विवाह आदि उत्सवों से दूरी बनाये रखती है। विधवा पुनः विवाह नहीं कर सकती है। निम्न जाति में नाता प्रथा पाई जाती है वह अपने मृत पति के भाई या अन्य पुरूष से विवाह कर सकती है। घर से बाहर काम कर सकती है, पर्दा प्रथा का भी अधिक प्रचलन नहीं है। भारतीय हिन्दू समाज में सन्तान हीन बाल–विधवा, युवा–विधवा, अधेड़ विधवा, प्रौद विधवा, वृद्ध विधवाओं के साथ अत्याचार, शोषण, हिंसा, उनके रिश्तेदार, ससुराल पक्षों वाले सास, ससुर, देवर, जेठ, ननद करते हैं। इनका यौन शोषण, लैंगिक दुर्व्यवहार करना कई परिवारों में आम बात होती है। गाली–गलौच करना, सम्पत्ति को हड़प लेना, भूखा रखना। विधवा एवं उनके बच्चों को नौकर की तरह रखा जाता है। उनके साथ दुर्व्यवहार किया जाता है। अस्वस्थ होने पर चिकित्सक के पास लेकर नहीं जाते। चुनाव में वोट नहीं देना, दिन में नहीं सोने दिया जाता, त्यागमय जीने पर विवश किया जाता है।

भारतीय विधवा महिलाओं के विरूद्ध हिंसा के कारण

(1) अशिक्षा–अधिकांश भारतीय महिलाएँ अशिक्षित होती हैं, अपने अधिकारों के प्रति सजग नहीं होती, कानूनों, संगठनों का ज्ञान नहीं होता है। (2) पारिवारिक तनाव, (3) पुरूष प्रधानता, (4) स्त्रियों की पुरूष पर अधिक निर्भरता, (5) सामाजिक कुप्रथाएँ, (6) अपराधी के प्रति निष्क्रियता, (7) महिलाओं के प्रति द्वेष (8) भारतीय सामाजिक संरचना (9) महिलाओं के संकोच (10) नैतिकता का दोहरा मापदण्ड (11) महिलाओ में असुरक्षा का भय (12) समाज में नैतिकता का अभाव।

वर्तमान में भारतीय विधवा महिलाओं की प्रस्थिति

वर्तमान में वैश्वीकरण, आनुनिकीकरण, पश्चिमीकरण, संस्कृतिकरण के फलस्वरूप विधवा महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन हुआ है, उन्हें संविधान में समान दर्जा दिया गया है। संविधान का अनुच्छेद 14, 15

स्त्री–पुरूष समानता का अधिकार दिया है। हिन्दू विवाह अधिनियम 1955, संविधान का अनुच्छेद 42, 43, 44, 51, 325, 326 समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976, राष्ट्रीय महिला आयोग, विभिन्न स्वयं सेवी संगठनों की स्थापना की गयी है। पंचवर्षीय योजनाओं में विधवा महिलायें, अन्य महिलाओं की सुरक्षा हेतु कई कानून बनाये गये हैं। भारतीय दण्ड संहिता 1860 की धारा 376 बलात्कार से सुरक्षा प्रदान करता है। यौन उत्पीड़न से संरक्षण अधिनियम की स्थापना की गयी। घरेलू हिंसा संरक्षण अधिनियम 2005, बाल–विवाह अधिनियम 2006, दहेज संरक्षण अधिनियम 1961, क्रूरतापूर्ण आचरण से संरक्षण 498ए, दहेज शोषण प्रदर्शन से सुरक्षा प्रदान करने के लिये संरक्षण एक्ट 1986, हिन्दू उत्तराधिकार एक्ट1956, विधवा पेंशन योजना की स्थापना की गयी।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि अब विधवा महिलाएं अबला नहीं है, बल्कि हर क्षेत्र में अपना वर्चस्व कायम करने में सफल हुई है। अपनी बुद्धी, साहस के बल पर उसने परचम लहराया है। अब वह सफेद साड़ी पहन कर घर की चार दिवारी में शोषण, अत्याचार का शिकार नहीं होती है। आज विधवा महिलाएं अपने पति के साथ सती नहीं होती। विधवा होने पर भी कई विधवाएं बिंदी, चूड़ी, बिछिया, सुहाग की चीजों को पहनती है, हर उत्सव, त्यौहारों में, धार्मिक क्रियाकलापों में हर्षोल्लास के साथ भाग लेती है। 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में लगभग 4.3 करोड़ विधवाऐं हैं, जो कुछ देशों की जनंसख्या के बराबर है, यह चिंता का विषय है, विधवाओं को वर्तमान डिजिटल युग में भी उनके साथ अन्यायपूर्ण व्यवहार किया जाता है। 2011 की जनगणना के अनुसार 58 प्रतिशत विधवाएँ 60 साल से ऊपर की 32 प्रतिशत 40 से 59 साल के बीच की 09 प्रतिशत 20 से 39 साल के आयु की है और एक नगण्य समूह 19 साल से कम उम्र की विधवाओं की है। लगभग 1/3 विधवाऐं 40 से 59 वर्ष आयु वर्ग की है। विधवाओं के प्रति अत्याचार बढ़ रहे है। कानूनी प्रावधानों उनके प्रभावी क्रियान्वयन द्वारा ही महिलाओं, विधवाओं पर होने वाले अपराध अत्याचारियों की मानसिकता को बदला जा सकता है। आज आवश्यकता इस बात की है कि जब तक समाज का दृष्टिकोण, महिलाओं के प्रति सकारात्मक, सम्मानजनक नहीं होगी तब तक महिलाओं की वर्तमान स्थिति संतोषजनक नहीं हो सकती है। आज समाज में उसे कलंकित नहीं माना जाता। इसके बावजूद भी हिंसाएं, अत्याचार महिलाओं के प्रति बढ़ रहे हैं। अतः आवश्यकता इस बात की है कि पुरूषों को महिलाओं के प्रति अपनी सोच में परिवर्तन लाना चाहिए। निःशुल्क कानूनी सहायता, स्वस्थ मानसिकता, सुरक्षा के कड़े इंतजाम, जागरूकता, शीघ्र कठोर न्याय व्यवस्था सभी के सम्मिलित प्रयासों से ही सुधार सम्भव है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

⇒ पाटिल गोवारी डी. (2000) 'ए स्टडी इन डेप्रिवेशन हिन्दू विडोज', ज्ञान पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली।

⇒ डॉ. के. पदमनाभन (2006) 'सोशियो इकोनोमिक स्टेटस ऑफ विडोज', सीरीज पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

⇒ डॉ. परमार लीना (2003) 'कारगिल वार विडोज', राजस्थान पत्रिका, केसर गढ़ पृ.सं.26

⇒ घाड़िली रेहाना 'वूमन इन इण्डिया सोसायटी'

⇒ राय अजीत कुमार (1985) 'विडोज आर नोट फॉर बर्निंग', ए.बी.सी. पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली।

⇒ कुरेशी मुनिरूद्दीन (2003) 'सोशियल स्टेट्स ऑफ इण्डियन वूमन'

⇒ रामाबाई पंडिता (1998) द हाई कास्ट हिन्दू वीमैन

⇒ अंसारी एम.एन – राष्ट्रीय महिला आयोग और भारतीय नारी ज्योति प्रकाशन 2001 पृ. सं. 165.

⇒ आहुजा राम (1987) – काईम अगेस्ट वूमन रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।

⇒ कॉर्मक (1953) 'द हिन्दू वूमन' ब्यूरो पब्लिकेशन्स टीचर्स कॉल कोलम्बिया न्यूयॉर्क पृ. सं. 173.

⇒ टी.एस. ब्रुबकर (1985) 'लेटर लाईफ फैमिली' सेज पब्लिकेशन्स लंदन पृ. सं. 94–95.

♦□♦